International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 963-965

मिथ्याभिमान

डॉ0 अशोक कुमार दुबे
एसोशिएट प्रोफेसर–संस्कृत, बी0एस0एन0वी0पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

भारतीय दार्शनिक चिन्तन के अनुसार संसार में मनुष्य सहित समस्त जीवों का अस्तित्व स्थूल शरीर व उसमें विद्यमान सूक्ष्म शरीर के कारण होता है। स्थूल अथवा भौतिक शरीर का निर्माण पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश जैसे पॉच पदार्थों से हुआ है जबकि स्थूल शरीर में विद्यमान सूक्ष्म शरीर का निर्माण मन, बुद्धि, चित्त तथा अहंकार से हुआ है। सांख्य दर्शन के मूल स्रोत 'सांख्यकारिका' में ''प्रकृतेर्महान् ततोहंकारः तस्माद् गणश्च षोडशकः, तस्मादपि षोडशकात् पंचभ्यः पंचभूतानि''[1] कहा गया है जिसका तात्पर्य है कि पॉच कर्मेन्द्रियों, पॉच ज्ञानेन्द्रियों, मन और पंचमहाभूतों (पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश) अर्थात् कुल 16 तत्वों के संयोजन से जीवों का निर्माण होता है। प्रकृति से महान तत्व बुद्धि होती है और बुद्धि से अहंकार उत्पन्न होता है। मन की उत्पत्ति अहंकार से होती है और मन, बुद्धि व अहंकार से चित्त का तब निर्माण होता है जब उस पर चेतन (परमात्मा) का तेज पड़ता है अथवा उसमें परमात्म–तत्व समाविष्ट हो जाता है। चूँकि प्रकृति अपने आप में अचेतन अथवा जड़ (पदमतज) होती है इसलिए प्रकृति से उत्पन्न होने वाले मन, बुद्धि व अहंकार भी मूलतः जड़ होते हैं परन्तु जब इनका सम्बन्ध परमात्मा से हो जाता है तब यह सचेतन हो जाते हैं और संसार के विषयों अथवा जगत् प्रपंचों में क्रियाशील हो जाते हैं। इस प्रकार 'अहंकार' जीवों का मूल तत्व होता है।

अहंकार करने वाले व्यक्ति में कर्तापन का भाव आ जाता है जिसका निषेध करते हुए भगवान कृष्ण ने गीता के अध्याय 3 में कहा है : ''प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः, अहंकार विमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते''[2] जिसका तात्पर्य है कि संसार के समस्त कर्म प्रकृतिप्रदत्त गुणों के कारण सम्पन्न होते हैं परन्तु फिर भी अहंकार–जनित मूर्खता के कारण मनुष्य अपने को ही समस्त कर्मों का करने वाला (कर्ता) मान लेता है। गीता के ही अध्याय 3 में कहा गया है–

> ''अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिताः, मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तोऽभ्यसूयकाः''[3]

जिसका अर्थ है कि अहंकार, बल, घमण्ड, कामना, क्रोध तथा परनिन्दा आदि से ग्रस्त व्यक्ति स्वयं अपने में तथा दूसरों में भी बैठे हुए परमात्मा का आभास नहीं कर पाता है। गीता में 'यद्यद्विभूतिमत्सत्वं श्री
मदूर्जितमेव वा' कहते हुए भगवान कृष्ण ने कहा है कि संसार में कोई भी पदार्थ अथवा प्राणी जो शक्तिमान, सुन्दर और प्रिय प्रतीत होता है और जिसे जीवन में सफलता प्राप्त हुई हो वह सब परमेश्वर की शक्ति में से उसे मिले हुए एक अंश की ही महिमा है न कि उस पदार्थ अथवा प्राणी की अपनी स्वयं की शक्ति अथवा महिमा। अतएव इन पर यदि कोई अभिमान करता है तो वह बहुत बड़ी भूल करता है। सन्त कबीर ने गर्व अथवा अहंकार करने वालों को सावधान करते हुए कहा है :

> ''कबिरा गर्व न कीजिए काल गहे कर
> केश, न जाने कब मारिहैं का घर का परदेश''[4]

जिसका आशय है कि काल (मृत्यु) ने अपने हाथों से मनुष्य सहित समस्त जीवों का बाल कसकर पकड़ कर रखा है और क्या घर क्या बाहर, न जाने कब और कहॉ मार देगा, इसलिए मनुष्य को किसी भी चीज का गर्व अथवा अहंकार नहीं करना चाहिए क्योंकि जीवन क्षणभंगुर है इसलिए गर्व अथवा अहंकार करना व्यर्थ है। रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदास जी ने शक्ति सम्पन्न व्यक्तियों के अहंकार पर कहा है

> ''नहिं कोउ अस जनमा जग माहीं,
> प्रभुता पाइ जाहि मद नाहीं।''[5]

अतिशय दम्भ का दुष्परिणाम मनुष्य के जीवन में कितना दुःखद हो सकता है, इसे ''नीतिशास्त्र'' के इस श्लोक से सहज ही समझा जा सकता है :

> ''अतिदर्पे हता लंका, अतिमानी च कौरवाः,
> अतिदाने बली बद्धः, अति सर्वत्र गर्हितम्।''

ज्ञान, धन व शक्ति पा जाने पर सज्जन व दुर्जन व्यक्ति उनका किस प्रकार सदुपयोग व दुरुपयोग करते हैं, इस पर किसी विद्वान का यह मत अवलोकनीय है

> ''विद्या विवादाय धनं मदाय, शक्तिं परेषाम् परिपीडनाय,
> खलस्य साधोर्विपरीतमेतत्, ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय''

जिसका अर्थ है कि सज्जन और दुर्जन व्यक्ति ज्ञान, शक्ति व धन का अलग–अलग तरह प्रयोग करते हैं। दुर्जन व्यक्ति ज्ञान का उपयोग विवाद अथवा कुतर्क करने के लिए, धन का उपयोग दम्भ के प्रदर्शन के लिए और शक्ति का उपयोग दूसरों को पीड़ा पहुँचाने के लिए करता है जबकि सज्जन व्यक्ति ज्ञान, धन व शक्ति का उपयोग ज्ञान के प्रसार के लिए, दान के लिए तथा दूसरों की रक्षा करने के लिए करता है।

ईश्वर की योजना व इच्छा के आगे मनुष्य कितना विवश व शक्तिहीन है परन्तु फिर अपनी योजना व शक्ति को लेकर वह कितना गफलत में रहता है इस पर किसी शायर का यह नजरिया देखिए :

''न इसके जिन्दगी वश में न इसका मौत पर काबू ,
मगर इंसान कब आखिर खुदा होने से डरता है।''

अपनी योग्यता से अधिक अपने को आंकने वाले शायरों पर विख्यात उर्दू शायर मुनव्वर राना का यह तन्ज देखिये–

''जो अपने कॉधों पे सूरज उठाये फिरते हैं,
मर भी जायें तो मुनव्वर नहीं होने वाले।''

लोकजीवन में महत्वपूर्ण व शक्तिसम्पन्न पदों पर विराजमान महानुभावों के पद व शक्ति–जनित दम्भ एवं अहमन्यता पर कटाक्ष करते हुए किसी शायर ने कहा है :

''तुझसे पहले भी एक शख्स यहॉ तख्त–ए–नशीं था,
खुदा होने का उसको भी इतना ही यकीं था। ''

लोक प्रशासन में अधिकार व शक्ति–सम्पन्नों के अपने अधिकार व शक्ति के मद में चूर होने पर एक शायर ने अपनी पीड़ा कुछ यूं व्यक्त की है :

''घरों पे नाम थे, नामों के साथ ओहदे थे,
बहुत तलाश किया, कोई आदमी न मिला।''

एक अन्य शायर ने भी शक्तिसम्पन्न पदधारकों को पद के मद से सावधान करते हुए यूं कहा है–

''खुदा हमको ऐसी खुदाई न दे,
कि अपने सिवा कुछ दिखाई न दे।''

प्रसिद्ध वकील श्री राम जेठमलानी की बहुचर्चित कृति 'Big Egos, Small Men' शक्ति–सम्पन्नों के अनुचित व अनावश्यक दम्भ पर एक रोचक पठनीय पुस्तक है। ईश्वर की सत्ता का आभास कर लेने पर इस्लाम धर्म के मशहूर इमाम व खलीफा हजरत अली ने अपनी अनुभूति इस प्रकार व्यक्त की है–

''मैंने खुदा को अपने इरादों की शिकस्त में पहचाना।''[6]

स्वामी रामतीर्थ द्वारा दम्भ पर कहा गया यह शेर देखिए–

''महारथ बड़ी है इल्म–ए–रियाजी में तुम्हें,
तुले शबे फिराख जरा नाप दो,''

जिसका तात्पर्य है कि यदि तुझमें किताबें पढ़–पढ़ कर बड़ा ज्ञानी हो जाने का दम्भ हो गया हो तो दो मोहब्बत करने वालों के एक–दूसरे से बिछुड़ जाने पर उनको जो सदमा पहुंचता है उसकी गहराई जरा नाप कर बता दो।

बड़े–बड़े दम्भी लोक प्रशासकों की सेवानिवृत्ति के बाद अथवा शक्ति व पद से अलग हो जाने के बाद समाज में कैसी स्थिति हो जाती है, इस पर गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रामचरितमानस में कही गयी यह पंक्ति उपयुक्त प्रतीत होती है–

''गगन चढ़इ रज पवन प्रसंगा,
कीचहिं मिलइ नीच जल संगा''

जिसका अर्थ है कि तुच्छ धूल का कण भी जब पवन अर्थात् शक्तिसम्पन्न का बल पा जाता है तो गर्व से आसमान में चढ़ जाता है परन्तु जब पवन का बल अथवा वेग समाप्त हो जाता है तो वही धूल का कण स्वभाव से नीचे की ओर जाने वाले जल का साथ पकड़ कर धरती पर आकर कीचड़ में मिल जाता है। महाभारत के युद्ध में अपनी विजय के बाद पाण्डवों को अभिमान हो गया कि वह विश्वयुद्ध उन्होंने अपने बल और पराक्रम से जीता था। उनके इस अभिमान के परीक्षण का समय तब आया जब पाण्डवों में से अर्जुन कृष्ण की गोपियों की जंगलवासी भीलों से रक्षा नहीं कर सके। यह वृत्तान्त यूँ हुआ कि बहेलिये के बाण द्वारा कृष्ण के मार दिये जाने के बाद कृष्ण की एक हजार गोपियॉ द्वारका (गुजरात) में अनाथ हो गयीं थीं जिन्हें अर्जुन अपनी सुरक्षा में लेकर द्वारका से इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) के लिए जा रहे थे तो रास्ते में जंगल पड़ा। जंगल में निवास करने वाले भीलों ने गोपियों को लूट लिया और गाण्डीव जैसे धनुषबाण के होते हुए भी अर्जुन कुछ नहीं कर सके क्योंकि समय के साथ अभिमानवश वह अपनी पहले वाली शक्ति खो चुके थे। इसी पर किसी कवि ने क्या खूब कहा है–

''पुरुष बली नहिं होत है समय होत बलवान,
भिल्लन लूटीं गोपियॉ वहि अर्जुन वहि बान।''

एकमात्र भगवान् की ही कृपा से प्राप्त हुई किसी उपलब्धि अथवा सफलता को अपनी शक्ति व सामर्थ्य से प्राप्त हुई उपलब्धि अथवा सफलता मानने वाले लोगों को केनोपनिषद् में वर्णित यह रोचक दृष्टान्त अवश्य जानना चाहिए। 'देवासुर संग्राम' में परम्ब्रह्म परमेश्वर ने देवताओं पर कृपा करके उन्हें अपनी शक्ति प्रदान कर दी जिससे उन्होंने असुरों पर विजय प्राप्त कर ली। यह विजय वास्तव में परमेश्वर की ही थी और देवता लोग तो केवल निमित्तमात्र थे परन्तु अभिमानवश देवतागण परमेश्वर की महिमा को अपनी महिमा समझ बैठे और यह मान बैठे कि वे बड़े शक्तिशाली थे और अपने ही बल व पराक्रम से असुरों पर विजय पा ली। देवताओं के इस मिथ्या अभिमान को परमेश्वर समझ गये। परमेश्वर ने सोचा कि यदि देवताओं का यह अभिमान बना रहा तो उनका पतन हो जायेगा। अतएव देवताओं का दर्प समाप्त करने के लिए परमेश्वर यक्ष का रूप धारण करके देवताओं के सामने प्रकट हुए परन्तु यक्ष के अद्भुत व विशाल रूप को देखकर देवतागण यह नहीं जान सके कि स्वयं परमेश्वर ही यक्ष का रूप धारण करके उनके समक्ष प्रकट हुए हैं। देवताओं ने अपने बीच से 'अग्नि देवता' से कहा कि वह यक्ष से प्रश्न आदि करके उसकी वास्तविक पहचान जानने का प्रयत्न करें। तब अग्नि देवता यक्ष के पास पहुँचकर खड़े हो गये। अपने समीप खड़ा देखकर जब यक्ष ने अग्नि से पूछा कि आप कौन हैं तो अग्नि ने सोचा कि मेरे तेजपुंज स्वरूप को तो ब्रह्माण्ड में सभी जानते हैं तो फिर इस यक्ष ने मुझे कैसे नहीं पहचाना और दम्भपूर्वक उत्तर दिया कि मैं प्रसिद्ध अग्नि हूँ और मुझमें इतनी शक्ति है कि मैं यदि चाहूँ तो इस समस्त भूमण्डल में जो कुछ भी दिखाई दे रहा है सबको जलाकर राख कर दूँ। तब यक्ष ने अग्नि के समक्ष एक सूखा तिनका रख दिया और कहा कि कृपया इस सूखे तिनके को जला दीजिए। इतने तुच्छ कार्य को करने के लिए यक्ष द्वारा कहे जाने को अपनी शक्ति का अपमान मानते हुए अग्नि ने उस तिनके को जलाने के लिए अपनी पूरी शक्ति लगा दी परन्तु वह तिनका नहीं जला क्योंकि परमेश्वर ने अग्नि से अपनी शक्ति वापस ले ली थी। सूखा तिनका जला पाने में अपनी विफलता को देखकर अग्नि का सिर लज्जा से झुक गया और वे आश्चर्यचकित होकर चुपचाप देवताओं के पास लौट आये

और बोले कि मैं उस अद्भुत यक्ष को नहीं जान सका कि वह कौन है। इस पर देवताओं ने 'वायु' को उस यक्ष के बारे में पता लगाने के लिए भेजा। समीप पहुंचने पर यक्ष ने वायु से पूछा कि आप कौन हैं। इस पर तमक कर वायु ने उत्तर दिया कि मैं वायु हूँ और मुझमें आकाश में बिना किसी आधार के विचरण करने की शक्ति है और यदि मैं चाहूँ तो सम्पूर्ण संसार में बड़े–बड़े पर्वतों सहित जो कुछ दिखाई दे रहा है उसे बिना किसी आधार के उठा लूँ और उड़ा ले जाऊँ। तब यक्ष (परमेश्वर) ने वायु में से अपनी शक्ति वापस ले ली और वही सूखा तिनका वायु के समक्ष रखकर उनसे भी अनुरोध किया कि कृपया इस तिनके को उठा लीजिए और उड़ा ले जाइए। वायुदेवता ने यक्ष के इस कथन को मानों अपना अपमान समझा और उस तिनके को उन्होंने उड़ाना चाहा परन्तु अपनी पूरी शक्ति लगा देने के बाद भी जब वायुदेवता उस तिनके को नहीं उड़ा सके तो वह भी लज्जा से सिर झुकाए हुए वहां से लौट आये और देवताओं से बोले कि मैं भी नहीं जान सका कि यह यक्ष कौन है। अब देवताओं ने 'इन्द्र' को उस यक्ष के बारे में जानने के लिए भेजा। इन्द्र देवताओं के राजा होने के कारण अग्नि और वायु से भी अधिक अभिमानी थे इसलिए उनके पास पहुँचते ही यक्ष गायब हो गये परन्तु तुरन्त ही अपना स्वरूप परिवर्तन करके समस्त प्रकार की शक्तियों की आदिस्रोत भगवती उमा देवी का रूप धारण करके उसी स्थान पर प्रकट हो गये। तब इन्द्र ने भगवती उमादेवी से पूछा कि अभी –अभी मैं जिस दिव्यरूप यक्ष को देख रहा था वह अचानक कहॉ गायब हो गया भगवती ने उत्तर दिया कि तुम जिस दिव्य यक्ष को देख रहे थे वह वास्तव में साक्षात् परम्ब्रह्म परमेश्वर थे और तुम देवताओं ने उन्हीं परम्ब्रह्म परमेश्वर की शक्ति व कृपा से असुरों पर विजय प्राप्त की थी और वह विजय स्वयं परम्ब्रह्म परमेश्वर की विजय थी क्योंकि ऐसा वह चाहते थे और तुम देवतागण तो निमित्त (साधन) मात्र थे परन्तु मिथ्या अभिमानवश तुम लोगों ने परम्ब्रह्म परमेश्वर की इस विजय को अपनी विजय मान लिया और उनकी महिमा को अपनी महिमा समझने लगे, इसीलिए परम्ब्रह्म परमेश्वर ने तुम देवतागण का मिथ्या अभिमान नष्ट करने के लिए और तुम्हारा कल्याण करने के लिए यक्ष के रूप में प्रकट होकर अग्नि और वायु के गर्व को चूर्ण किया और तुम देवतागण को वास्तविक ज्ञान देने के लिए मुझे तुम्हारे समक्ष उपस्थित होने के लिए प्रेरित किया। भगवती ने इन्द्र देव को समझाया कि तुम अपनी स्वतंत्र शक्ति के सारे अभिमान का त्याग कर दो क्योंकि तुझमें जो भी शक्ति आयी है वह परम्ब्रह्म परमेश्वर ने ही तुम्हें दी है। भगवती द्वारा दिये गये इस ज्ञान को इन्द्र ने जाकर देवताओं को बताया जिससे उन सबका भी अपनी शक्ति व सामर्थ्य को लेकर जो अज्ञान था वह दूर हो गया और इन्द्र सहित समस्त देवताओं को अपनी लघुता का आभास हुआ और वे एकमात्र परमेश्वर की ही शक्ति व सत्ता में आस्थावान् हो गये। इस कथानक का वास्तविक भाव वस्तुतः यही है कि किसी भी व्यक्ति अथवा पदार्थ में अपनी स्वयं की कोई शक्ति, सामर्थ्य अथवा विलक्षणता नहीं होती अपितु स्वयं ईश्वर द्वारा दी गयी शक्ति, सामर्थ्य व विलक्षणता ही होती है। इसलिए किसी को यह भ्रम व अभिमान नहीं पाल लेना चाहिए कि उसे स्वयं अपनी योग्यता, शक्ति अथवा सामर्थ्य के कारण कोई पद, शक्ति, प्रतिष्ठा, विशिष्टता अथवा सफलता आदि प्राप्त हुई है अपितु ऐसा केवल सर्वशक्तिमान ईश्वर द्वारा कृपापूर्वक दी गयी उसकी शक्ति के कारण हुआ है। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक व लेखक सिगमाण्ड फ्रायड (Sigmound Freud) के अनुसार मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास में मूलतः तीन तत्व 1. बुद्धि 2. अहं (महव) तथा अतिअहं (superego) जीवन की अलग–अलग अवस्थाओं में उत्पन्न होते हैं। इनमें से बुद्धि मनुष्य को जन्म के साथ ही जैविक रूप से प्राप्त रहती है परन्तु यह बुद्धि अचेतन रूप में होने के कारण संसार की वास्तविकताओं से परिचित नहीं होती है अपितु यह स्वभाव से आनन्दोन्मुखी होती है और दुःखों से बचना चाहती है। उदाहरण के लिए बच्चा पैदा होते ही अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए और क्षुधा की शान्ति के लिए रोने लगता है। अहं व्यक्तित्व का आंशिक रूप से चेतन तत्व होता है और वास्तविक परिस्थितियों आदि को समझने की सामर्थ्य रखता है। अहं मस्तिष्क की तर्क क्षमता और स्मृति का भी द्योतक होता है। अतिअहं मनुष्य में आन्तरिक नैतिक मानक के रूप में माता–पिता से अथवा कुछ सीमा तक सामाजिक मूल्यों से भी आता है।

अर्थशास्त्र, राजनय व लोकनीति आदि के परमाचार्य चाणक्य ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'कौटिल्य अर्थशास्त्र' में राजाओं/प्रशासकों को उनकी अपनी ही भलाई के लिए काम, क्रोध, लोभ, हर्ष, अहंकार, मद जैसे छः दुर्गुणों से बचने का परामर्श देते हुए कहा है :

''कामः क्रोधस्तथा लोभो हर्षो मानो मदस्तथा,
षड्वर्गमुत्सृजेदेनमस्मिन्त्यक्ते सुखी नृपः''[7]।

लम्बे समय तक शासन–प्रशासन का अनुभव रखने वाले लोकनीति, राजनीति व दण्डनीति आदि के मर्मज्ञ उज्जैन के चक्रवर्ती सम्राट भर्तृहरि ने लगभग दो हजार वर्ष पूर्व सन्यास धारण करने के उपरान्त जनपद मिर्जापुर के चुनार नामक स्थान पर गंगा तट पर अपने अनुभवों को 'नीतिशतक' नामक ग्रन्थ में रेखांकित करते हुए अल्पज्ञानियों को अपने अल्पज्ञान पर इतराने से बचने का परामर्श देते हुए इस प्रकार कहा है :

'अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः,
ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्मापि तं नरं न रन्जयति''

जिसका अर्थ है कि मूर्ख व्यक्ति को आसानी से प्रसन्न किया जा सकता है, विशिष्ट ज्ञान रखने वाले व्यक्ति को अपेक्षाकृत और भी आसानी से प्रसन्न किया जा सकता है परन्तु जो मनुष्य अपने थोड़े से ज्ञान के कारण स्वयं को बहुत बड़ा ज्ञानी समझता हो उसे मनुष्य तो क्या भगवान भी प्रसन्न नहीं कर सकता है। इसलिए समझदार व्यक्ति को यथासम्भव व्यर्थ का दम्भ करने से बचना चाहिए।

सन्दर्भ

1. सांख्यकारिका – ईश्वरकृष्ण।
2. श्रीमद्भगवद्गीता – अध्याय 3 – गीता प्रेस, गोरखपुर।
3. श्रीमद्भगवद्गीता – अध्याय 3 – गीता प्रेस, गोरखपुर।
4. कबीर के दोहे – संत कबीर।
5. रामचरितमानस – गोस्वामी तुलसीदास।
6. 'Big Egos, Small Men' - श्री राम जेठमलानी।
7. अर्थशास्त्र – कौटिल्य।